'पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन'

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय के
राजनीति विज्ञान विषय में
पीएच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रारूप

''बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ''

शोध निर्देशक
डॉ. सपना गहलोत

शोधार्थी
मुकेश कुमारी
EN.NO JVR-III/23/12466

मानविकी एवं समाज विज्ञान विभाग
ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय,जयपुर राजस्थान

2023

पीएच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तावित शोध विषय की रूपरेखा

1 शोध शीर्षक

2 विषय परिचय

3 शोध के उद्देश्य

4 साहित्य का पुनरावलोकन

5 शोध प्रविधि

6 शोध की परिकल्पनाएँ

7 शोध का महत्त्व एवं प्रासंगिकता

8 शोध कार्य की प्रस्तावित अध्याय योजना

9 संदर्भ ग्रंथ सूची

शोध शीर्षक :– 'पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन'

विषय परिचय :– पं. दीनदयाल जी एक राष्ट्रवादी चिंतक के रूप में जाने जाते हैं। आपने एकात्म मानववाद के रूप में अपने विचारों की व्याख्या की तथा एक राष्ट्रवादी दर्शन के रूप में इसे स्थापित करने का प्रयत्न किया। उन्होंने एकात्म मानववाद दर्शन को जन–जन तक पहुँचाने का प्रयास किया। वे न केवल वैचारिक चुनौतियों के प्रति सजग थे परन्तु उन चुनौतियों का सामना राष्ट्रवाद के माध्यम से करने को दृढ़ संकल्प भी प्रतीत होते हैं। भारत जैसा विशाल एवं सर्वसाधन सम्पन्न राष्ट्र जिसने अपनी ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर सम्पूर्ण विश्व को अपने ज्ञान पुंज से आलोकित कर मानवता का पाठ पढ़ाया तथा विश्व में जगद्गुरू के पद पर प्रतिस्थापित हुआ, ऐसे विशाल राष्ट्र के पराधीनता के कारणों पर दीनदयाल जी का विचार और स्वाधीनता पश्चात् समर्थ और सशक्त भारत बनाने में

पं. दीनदयाल जी राष्ट्र के समक्ष उपस्थित विभिन्न वैचारिक चुनौतियों के अंतर्गत द्विसंस्कृतिवाद तथा बहुसंस्कृतिवाद भी मानते हैं अपने लेख में वे भारत को एक संस्कृति वाला राष्ट्र मानते हैं अपने लेख राष्ट्रजीवन की समस्याएं राष्ट्रधर्म में लिखते हैं कि भारत में एक ही संस्कृति रह सकती है। एक से अधिक संस्कृतियों का नारा देश के टुकड़े–टुकड़े करके हमारे जीवन का विनाश कर देगा। अतः आज लीग का द्विसंस्कृतिवाद, कांग्रेस का प्रच्छन्न द्विसंस्कृतिवाद तथा साम्यवादियों का बहुसंस्कृतिवाद नहीं चल सकता। आज तक एक–संस्कृतिवाद को संप्रदायवाद कहकर ठुकराया गया किंतु अब कांग्रेस के विद्वान भी अपनी गलती समझकर इस एक–संस्कृतिवाद को अपना रहे हैं। इसी भावना और विचार से भारत की एकता तथा अखंडता बनी रह सकती है तथा तभी हम अपनी संपूर्ण समस्याओं को सुलझा सकते हैं।

पं. दीनदयाल जी वीर सावरकर की भांति प्रखर राष्ट्रभक्त के साथ मुखर राष्ट्रभक्त भी थे। पं. दीनदयाल जी राष्ट्रभक्ति को आदर्श के रूप देखते थे। राष्ट्र को एक विराट के रूप में देखते थे। संस्कृति की व्याख्या करते समय राष्ट्र के साथ चिति शब्द का प्रयोग करते थे। उनके अनुसार संस्कृति राष्ट्र का शरीर, चिति आत्मा एवं विराट उसका प्राण है। भूमि, जन तथा संस्कृति के संघात से राष्ट्र बनता है।

पं. दीनदयाल जी जो देश को भौगोलिक इकाई, राज्य को राजनीतिक इकाई तथा राष्ट्र को सांस्कृतिक इकाई मानते थे। वे राजनीतिक रूप से राष्ट्रीय अखण्डता के प्रबल समर्थक थे। वे पश्चिम के राष्ट्रवाद को विश्वशांति के प्रतिकूल मानकर विवेचन करते थे। पं. दीनदयाल जी के अखण्ड भारत एवं सांस्कृतिक राष्ट्र अवधारणा की हिन्दु राष्ट्रवादी व्याख्या की कई लोग आलोचना करते थे। परन्तु वे अखण्ड भारत तथा हिन्दु राष्ट्र के बारे में आत्मविश्वास पूर्वक विचार व्यक्त करते थे।

पं. दीनदयाल जी ने हिन्दुत्ववादी एवं राष्ट्रवादी मन से पश्चिम की संघर्षपूर्ण आचरण पद्धति के बारे में कहा है यदि संघर्ष है तो वह प्रकृति का या संस्कृति का घोतक नही है विकृति का द्योतक है। जिस मत्स्य न्याय या जीवन संघर्ष को पश्चिम के लोगो ने हल निकाला, उसका ज्ञान हमारे दार्शनिकों को भी था। पं. दीनदयाल जी के उदार राष्ट्रवाद एवं उदार अन्तर्राष्ट्रवाद का आधार चिति है, यह उनके राष्ट्रवाद की ऐसी विशेषता है जो उनके चिन्तन को समकालीन भारतीय चिन्तकों में विशेष एवं प्रमुख स्थान प्रदान करती है उनके समस्त राष्ट्रवादी चिन्तन का दार्शनिक आधार अद्वैतवादी उदार प्रत्यवाद है उनका राष्ट्रवाद अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं नैतिकता का समर्थक है और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, सहयोग एवं समृद्धि की स्थापना करना चाहता है।

पं. दीनदयाल जी : राजनीतिक विचार

जिस प्रकार समाज के विभिन्न पक्षों का अध्ययन जैसे–समाज व्यवस्था, अर्थव्यवस्था का अध्ययन हम करते हैं उसी प्रकार से राजव्यवस्था का अध्ययन भी सर्वप्रमुख अध्ययन है। हम अगर भारत की राजव्यवस्था का अध्ययन नहीं करेंगे तो समाज की सुरक्षा पर अंकुश महसूस होगा। चूँकि भारतवर्ष एक ऐसा लोकतांत्रिक देश है जिसकी भूमि राजनीतिक वैचारिणी से भरी पड़ी है। भारत की प्रारम्भिक अवस्थायें राजनीतिक व्यवस्था प्रजातांत्रिक थी जिसमें प्रजा पर एक राजा शासन करता था। राजा अपनी प्रजा के सुख–दुःख में शामिल होता था। सन् 1947 के पहले की राजव्यवस्था तथा 1947 के बाद की राजव्यवस्था में काफी अन्तर देखने को मिलता है।

जब भारत में अनेक शासक आये और इस पर राज किया तत्पश्चात् मुगल शासक, अंग्रेजी हुकूमत की जब शासन सत्ता गयी तो भारत की राजव्यवस्था पर ग्रहण

आना प्रारम्भ हो गया। करीब दो सौ सालों तक अंग्रेजी हुकूमत ने भारत के विनियोजित समाज व्यवस्था, राजव्यवस्था, अर्थव्यवस्था को छिन्न–भिन्न कर दिया। अंग्रेजी शासन ने भारत की आत्मा कही जाने वाली विभिन्न विरासतों को जैसे–संस्कृति, समाज, मूल्य, आचार–विचार, वेशभूषा आदि विभिन्न ईकाईयों को प्रभावित किया।

पं. दीनदयाल दीनदयाल जी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की राजनीति व्यवस्था को स्वीकार नहीं करते थे। उन्होंने कांग्रेस की सत्ता को उखाड़ फेंकने की मनःस्थिति को बना लिया था। सन् 1963 में जब लोकसभा का चुनाव निकट आया तो उन्होंने तैयारी प्रारम्भ कर दी और घोषणा पत्र में उल्लिखित किया कि ”स्वतंत्रता की राजनीति में एक नए पर्व का प्रारम्भ करने के लिए जनता उत्सुक है। इस जनता के लिए ये चुनाव न केवल एक महान अवसर है बल्कि एक चुनौती थी। कांग्रेस पिछले बीस वर्ष से सत्ता में है और उसने अब जनता का विश्वास खो दिया है। कांग्रेस सरकार ने जनता के स्वाभिमान को पहचान कर कुछ नहीं किया है। जनता और जवानों के धैर्य तथा स्वार्थ, त्याग का प्रतिबिम्ब सरकारी नीतियों में कहीं दिखाई नहीं देता। देश की मौलिक एकता एवं एकात्मकता की सरकार ने अनदेखी की है। जनता की भावनाओं का कोई सम्मान सरकार ने नहीं किया है। जनता के कल्याण की ओर कोई ध्यान नहीं दिया है। सर्वस्पर्शी स्वावलम्बन, समृद्धि और स्वाभिमान से ओत–प्रोत सरस जीवन का प्रत्यय आने के स्थान पर कांग्रेस शासन में देश आर्थिक दिवालियापन, राजनीतिक दास्य और राष्ट्रीय अवहेलना के कगार पर आ पहुँचा है। स्वराज्य में ही स्वदेशी स्वधर्म और स्वतंत्रता का इस प्रकार गला घोंटा जाना इससे आगे सहन नहीं किया जा सकता। जनता अब कांग्रेस शासन को नहीं चलने देगी। उसे बदलना ही होगा।‘‘

इस प्रकार से पं. दीनदयाल जी में एक समय का आकलन किया और नेतृत्व के गलियारे में अपने आपको एक श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ता के रूप में प्रस्थापित किया। पं. दीनदयाल दीनदयाल जी के मन में यह घर कर गया था कि कांग्रेस सरकार को नेस्तनाबूत करना है यह प्रण उन्होंने कर लिया था।

पं. दीनदयाल जी ने जनता के पक्ष में बोलते हुए राष्ट्रीय लोकतांत्रिक विकल्प का नारा दिया और तत्कालिन सत्तारूढ़ कांग्रेस सरकार को हटाने का प्रारूप तैयार किया। कालान्तर में चुनाव के बाद चौथा महाचुनाव जनसंघ ने लड़ा और पं. दीनदयाल जी की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई जिससे तत्कालिन कांग्रेसी सरकार को काफी झटके का अनुभव महसूस हुआ।

भारतीय राष्ट्रीय वैचारिकी पर लगा कुठाराघात, भ्रष्टाचार, आर्थिक व्यवस्था की दयनीय स्थिति, लोकतंत्रात्मक मूल्यों का गिरते स्तर के प्रति जनता–जनार्दन का जनाक्रोश मतपेटी में डाला गया। इस स्थिति में अन्य देशों की राजनीतिक स्थिति को भी देखा गया। जैसे–रूस, चीन की कम्यूनिस्ट सत्तारुढ़ का लोकतंत्र के प्रति गिरती हुई स्थिति, अमेरिका का कठपुतली बनना, सैनिक तानाशाह का उभरना तथा भारत में लोकतंत्र की गलाघोंटू राजनीतिक पार्टियाँ लगातार लोकतंत्र का हनन करती आ रही थी।

पं. दीनदयाल जी के कर–कमलों द्वारा जनसंघ के लिए दिया गया अथक योगदान चुनाव में सम्मिलित मतदाताओं की निर्णायक भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। जैसे ही चुनाव परिणाम की उद्‌घोषणा की जानकारी लोगों के समक्ष प्राप्त हुई जनसंघ ने सभी मतदाताओं का आभार प्रकट किया और यह भरोसा दिलाया कि आने वाले समय में जनसंघ मिलजुल कर काम करेगी। लेकिन पं. दीनदयाल जी के समक्ष संविदा सरकार बनाने का निर्णय लेने का लोगों का मत प्रकट किया और विभिन्न राज्यों के दलों को सम्मिलित करके सरकार को बनाने के पक्ष में थे। इन सभी द्वन्द्वों के दौरान पं. दीनदयाल जी कहते हैं कि जनसंघ को संविधान में दिये गये गुण धर्म के आधार पर चलना चाहिए।

भारतीय राजनीति के गलियारे में राजनीतिक पहलू उस समय गरम हो गया जब भारत और चीन की 1962 की लड़ाई के बाद मई 1963 में भारत के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में तीन उपचुनाव हुए और एक गुजरात राज्य में हुआ। उत्तर प्रदेश के उपचुनाव में जौनपुर, फर्रुखाबाद और अमरोहा सर्वप्रमुख शहर था जिसमें उम्मीदवार के रूप में फर्रुखाबाद से प्रसिद्ध समाजसेवी राममनोहर लोहिया जी, अमरोहा से आचार्य

कृपलानी तथा जौनपुर से दीनदयाल जी को उम्मीदवार बनाया गया तथा गुजरात राज्य से मीनू मसानी जो कि राजकोट सीट से उम्मीदवार घोषित किये गये। यह उम्मीदवार संयुक्त विपक्षी प्रत्याशी थे। इस चुनाव ने राजनीति को हिलाकर रख दिया। परिणाम आया कि आचार्य कृपलानी तथा डॉ. राममनोहर लोहिया, मीनू मसानी ने विजय पताका को लहराया और पं. दीनदयाल जी की हार हुई। इस हार ने चुनाव को और भी रोमांचकारी बना दिया। दीनदयाल जी के हारने का कारण चुनाव को जीतने के लिए चुनाव नहीं लड़ा इसकी पुष्टी में गोलवलकर जी ने स्पष्ट किया कि 'हर हालत में हानि होगी, जीते या हारे। हारने पर कम।'

पं. दीनदयाल जी जनसंघ के सिद्धान्तों तथा सर्वांगीण नीतियों के पक्ष में वोट मांगना पसंद करते थे। सिद्धान्तवादी एवं प्रतिभा सम्पन्न नेता के रुप में पं. दीनदयाल जी इतने सरल, सहज, व्यावहारिकता से भरे पूरे व्यक्ति थे जो अपने प्रतिद्वन्द्वी को चुनाव जितने के बाद स्वयं बधाई देने पहुँचे थे। पं. दीनदयाल जी जब बधाई देने अपने प्रतिद्वन्द्वी के समक्ष रात्रि में पहुँचे तो लोग आवाक् हो गये। इस परिदृश्य को देखकर अटल बिहारी वाजपेयी जी ने अपने शब्दों में कहा कि ''वे संसद सदस्य नहीं थे, संसद सदस्यों के निर्माता थे।''

पं. दीनदयाल जी ने अपने चारित्रिक जीवन को एक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व्यवस्था को समन्वित करते हुए भारतीय राष्ट्रवाद की पृष्ठभूमि में एकात्म मानववाद जैसे भाव को लोगों के समक्ष जिस तरह से प्रस्तुत किया उसके मूल में एक नया समाज, नई राष्ट्रनीति, नयी राजव्यवस्था, नई अर्थनीति के उदय की कल्पना की गई थी। वह आज के वैश्विक दौर में अर्थात् तात्कालिक राजनीतिक सत्ता के रूप में प्रत्यक्ष रुप से दिखाई देती है। आज की राजनीतिक व्यवस्था इस बात की परिचायक बनी हुई है कि राज्यव्यवस्था किस तरह से चलाई जाये। पं. दीनदयाल जी की जो वैचारिकी थी उसके सामने आज की राजव्यवस्था खरी उतरी है।

पं. दीनदयाल जी ने जो भविष्य का सपना देखा था और वह सच में दिखाई दे रहा है। पं. दीनदयाल जी ने अपने राजनीतिक व्यवस्था के रुप में निम्न बिन्दुओं सहित उल्लेखित करते हुए विवेचित करते हैं–राज्य की उत्पत्ति, धर्मराज्य, राज्यवाद, प्रजातंत्र,

समाजवाद, लोक कल्याणकारी राज्य, संघात्मक बनाम एकात्मक राज्य तथा राष्ट्रवाद जैसे सामाजिक मुद्दों को उठाने का काम दीनदयाल जी ने किया था। दीनदयाल जी का सपना था कि भारत को एक ऐसा राष्ट्र बनाना है जहां सभी लोगों के बीच एकात्म की नीति प्राप्त हो, एक राष्ट्र हो, एक नीति हो, एक समाज हो और उनमें एकात्म मानववाद जैसे दीप प्रज्ज्वलित दिखाई देते हो। भारतीय राष्ट्रवादिता के संदर्भ में वे कहते हैं कि ''हमें अपने राष्ट्र, देश, लोग, संस्कृति, मूल्य, नियम, संविधान आदि के अनुरुप व्यवहार करना चाहिए तभी एक श्रेष्ठ देश, राष्ट्र, समाज की कल्पना की जा सकती है।''

पं. दीनदयाल जी ने अपने राजनीतिक जीवन को गोलवलकर जी से प्रारम्भ किया। गोलवलकर जी के सान्निध्य में जब वे आये तो उनसे काफी प्रभावित हुए और भारतीय राष्ट्रवादिता को एक क्षितिज की भाँति अपने आप को फैलाया। पं. दीनदयाल जी के द्वारा रचित ग्रन्थ में सम्राट चन्द्रगुप्त के ऐतिहासिक पात्रों जिसमें चाणक्य और चन्द्रगुप्त के बीच एक पराक्रमी रणनीतिकार को मानना भी अतिश्योक्ति नहीं है। चाणक्य ने घनानन्द के विशाल साम्राज्य को तहस–नहस करने का जो लक्ष्य ठाना था उसमें उन्होंने चन्द्रगुप्त जैसे सम्राट को माध्यम बनाया। चन्द्रगुप्त को उन्होंने तरासा और घनानन्द जैसे विशाल सेनायुक्त को परास्त करके मगध का राजा बनाया। पं. दीनदयाल जी अपने लेखन में छत्रपति शिवाजी को भी उल्लेखित करते हुए लिखते हैं कि–'छत्रपति शिवाजी ने हिन्दू राष्ट्र की आत्मा का साक्षात्कार किया और अपने जीवन काल में जब चारों ओर परकियों (विदेशियों) के अत्याचार से देशवासी त्रस्त थे एक हिन्दू साम्राज्य का निर्माण कर उन्होंने सारे देश की जनता के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत किया।'

पं. दीनदयाल जी कश्मीर के मुद्दे को बहुत ही सहज तरीके से सुझलाने की कोशिश में लगे रहते थे। इसको भारत के पक्ष में एक मजबूत कड़ी के रुप में जोड़ना था। पाकिस्तान को यह समझना चाहिए कश्मीर भारत के हृदय के रुप में विराजमान है उसको उस भाग से अपने आपको हटा लेना चाहिए और पाकिस्तान को चाहिए कि वह कश्मीर के बारे में अपनी स्थिति स्पष्ट करे। भारत की इसके बारे में स्थति स्पष्ट है कि

कश्मीर भारत का अविभाज्य अंग है, तथा भविष्य में भी रहेगा। इसको कोई भी शक्ति तोड़ नहीं सकती है।

राष्ट्रीयता के पोषण के लिए राजनीति होनी चाहिए। वह राजनीति जो राष्ट्र को क्षीण करे अवांछनीय रहेगी। स्वराज्य में यदि कष्ट हो तो भी वह उचित है बजाय उस स्वराज्य के जो पराया है। स्वराज्य की व्याख्या में तीन बातें प्रमुख रुप से आती हैं। पहली बात तो यह है कि राज्य उन लोगों के द्वारा संचालित हो जो राज्य के अंग हों। दूसरी विशेषता यह है कि ऐसा राज्य राष्ट्र के हित में चलना चाहिए यानी राष्ट्रीय हित में नीतियों का संचालन होना चाहिए और तीसरी बात यह है कि ऐसे राज्य में राष्ट्र का हित साधने का भी यदि आर्थिक अथवा वैदेशिक मामलों में किसी अन्य राष्ट्र का पिछलग्गू बन गया या दबाव में आने लगा तो स्वराज्य निरर्थक हो जाता है। सुरक्षा के मामले में यदि राज्य आत्मनिर्भर नहीं, नीतियों के मामले में स्वतंत्र नहीं और आर्थिक योजना में स्वयं पूर्ण नही तो वह राष्ट्र के लिए अहितकर कार्य करने की ओर प्रेरित हो जाता है। ऐसा परावलम्बी राज्य विनाश का कारण बनता है।

हमारी राष्ट्रीयता का आधार भारत माता है, केवल भारत नहीं। माता शब्द हटा दीजिए तो भारत केवल जमीन का एक टुकड़ा मात्र रह जायेगा। इस भूमि का और हमारा ममत्व तब आता है, जब माता वाला सम्बन्ध जुड़ता है। अखण्ड भारत देश की भौगोलिक एकता का ही परिचायक नहीं अपितु जीवन के भारतीय दृष्टिकोण का द्योतक है, जो अनेकता में एकता का दर्शन कराता है। अतः हमारे लिए अखण्ड भारत कोई राजनीतिक नारा नहीं जो परिस्थिति विशेष में जनप्रिय होने के कारण हमने स्वीकार किया हो बल्कि यह तो हमारे संपूर्ण दर्शन का मूलाधार है। राष्ट्रीय और एकात्मक संस्कृति की जो आधारभूत मान्यताएँ जन–संघ ने स्वीकार की हैं, उन सबका समावेश 'अखण्ड भारत' शब्द के अन्तर्गत आता है। अटक से कटक, कच्छ से कामरुप तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक सम्पूर्ण भूमि के कण–कण को पुण्य और पवित्र ही नहीं अपितु आत्मीय मानने की भावना अखण्ड भारत के अन्दर अभिप्रेत है।

भाषा भारत में नेताओं की चिन्ता का मुख्य विषय बन गई प्रतीत होता है। देश की अधिकाधिक भाषा क्या होनी चाहिए, यह निर्णय करने से पहले हमें यह तय कर

लेना होगा कि क्या हम संगठित रहना चाहते हैं। राष्ट्र की एकता एक ऐसा तथ्य है, जिस पर कोई भी प्रश्न नहीं उठना चाहिए तथा न ही इसे प्रमाणित करने या इसका खण्डन करने के लिए कोई बहस होनी चाहिए। राष्ट्रीय एकता प्रतिबंधात्मक, संवैधानिक, संस्थागत अथवा संविदात्मक नहीं होती है। यह वास्तविक और यथार्थपरक होती है।

पं. दीनदयाल जी : सामाजिक विचार

दीनदयाल जी ने मानव समाज के उद्धार हेतु अपने अभेद्य विश्वास को एक रचनाकार के रुप में एकात्म मानववाद जैसी अवधारणा के रूप में सृजित किया है। दीनदयाल जी का युग निर्णायक की भाँति समाज और व्यक्ति के बीच सम्बन्धात्मक रूप से एकात्म चिन्तन को सृजित करता है। पं. दीनदयाल जी ने समाज निर्माण के भारतीय चित्त के विचार एकात्म मानववाद से प्रारम्भ किये। फलतः भारतीय स्वतंत्रता 1947 ई. के बाद जब भारतीयता के वैचारिकी में बदलाव देखा गया तो भारत के बौद्धिक, सामाजिक, राजनीतिक विचारों में भी परिवर्तन दिखाई देना शुरु हुआ। चूँकि एक लम्बा समय भारत के ऊपर अंग्रेजी शासन का आच्छादित होने पर भारत के सम्पूर्ण वैचारिकी यथा, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक मूल्य आदि संस्थात्मक विचारधाराओं पर भी प्रभाव पड़ा था। चूँकि भारत के समाज का स्वरूप कुछ भिन्न था।

पं. दीनदयाल जी समाज को उल्लेखित करते हुए कहते हैं कि 'समाज की संगठित व्यवस्था ही समाज की स्वाभाविक अवस्था है।' अर्थात् जिस समाज में संगठनात्मक अवस्था का लोप हो वह समाज पूर्ण नहीं है। जिस समाज में धाराएँ जन्म सामुदायिकता छिन्न–भिन्न की स्थिति में हो वह समाज के निर्माण में एकात्म की भावना को सृजित करने में असफल होते हैं। जिस प्रकार से समाज के निर्माण के लिए छोटी–छोटी संस्थाओं को संगठित होने की आवश्यकता होती है। तब समाज का निर्माण होता है।

पं. दीनदयाल जी समाज के बारे में लिखते हुए कहते हैं कि 'आज के वर्तमान परिवेश में ऐसी विचारले चुकी हैं कि आप किस वाद में विश्वास करते हैं। हम केवल

भारतीय संस्कृति तथा भारतीय विचारधारा में विश्वास करते हैं।' पं. दीनदयाल जी आधुनिक वादों जैसे समाजवाद, पूँजीवाद, अराजकतावाद, अधिनायकवाद को पश्चिमी विचारधाराओं से जोड़ते हैं और उल्लेखित करते हैं कि समाज के लिए ये विचार विखण्डित हैं। अतः पश्चिमी समाज के जितने भी दर्शन हैं वे अधूरे है। वे सम्पूर्ण जीवन का विचार नहीं करते केवल दर्शन के किसी एक भाग का विचार करते हैं। इसलिए हम उनको स्वीकार नहीं करते हैं। अतः हमारी भारतीय संस्कृति कि सबसे सर्वप्रमुख विशेषता है कि हम सम्पूर्णता को मानते है।

वस्तुतः पं. दीनदयाल जी समाज को संगठित करते हुए कहते हैं कि समाज का निर्माण विभिन्न व्यक्तियों से सृजित होता है। समाज का एक स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है। समाज के भी शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा होते हैं और इस धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे पुरुषार्थो को साधक के रूप में साधना करनी पड़ती है। अर्थात् व्यक्ति और समाज एकात्मकता के बन्धन से आप में जोड़ने का काम करती है। व्यक्ति तथा समाज की पुरुषार्थ साधना एक ही सिक्के के दो पहलू के रूप में होते हैं। यह एक–दूसरे पर निर्भर होते हैं अर्थात् समाज व व्यक्ति के बीच पारस्परिकता होती है।

व्यक्ति और समष्टि की पुरुषार्थ साधना के लिए अनेकानेक सामाजिक संस्थानों को सृजित किया गया। जिसमें सर्वप्रमुख व्यक्ति होता है। जिसमें व्यक्ति के व्यक्तित्व एकांगी न होकर विविधांगी होते है। इन विभिन्न सम्बन्धों में एकता और एकात्मकता को मन–मस्तिष्क में रखकर व्यक्ति, विचार और व्यवहार करता है तो उसका समन्वित विकास करके वह सुखी व समाज को भी सुखी रखता है।

भारतीय परम्परा तथा संस्कृति की पृष्ठभूमि में चिन्तन करने वाले सामाजिक विचारकों में पं. दीनदयाल जी का नाम सर्वप्रमुख है। उनके चिन्तन में भारत की उदीयमान आत्मा का घनीभूत सार तथा मानव जाति के हित के लिए आध्यात्मिक संदेह निश्चित है। वे नये समाज का निर्माण करना चाहते थे। इसलिए वे कहा करते थे कि–'जब सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन नहीं होगा, तब तक सामाजिक व आर्थिक न्याय अमानवीय ही रहेंगे।' पश्चिम के जितने सामाजिक चिन्तक हैं उनकी दृष्टि एकांगी हैं। एकांगी दृष्टि मानव तथा समाज का सर्वांगीण विकास नहीं कर सकती है।

उन्होंने मनुष्य एवं समाज के विभिन्न पक्षों यथा—बौद्धिक, मानसिक, भौतिक एवं आध्यात्मिक के पूर्ण समन्वय पर आधारित संतुलित जीवन को ही श्रेयस्कर माना हैं। वे समाज की समस्त समस्याओं तथा सभी मनुष्यों के कल्याण की विवेचना करते हैं किन्तु आध्यात्मिक दृष्टिकोण को वे गांधी जी की तरह कभी आँख से ओझल होने नहीं देते हैं। इस दृष्टिकोण के कारण ही उन्होंने इस देश के इतिहास में चिरस्थायी स्थान प्राप्त कर लिया है। दीनदयाल जी के दर्शन को समझने के लिए हमें समाज के विभिन्न पक्षों को सारगर्भित रूप में गहनता से समझना होगा।

पूँजीवाद और समाजवाद दोनों भारत के लिए अनुपयुक्त है। पाश्चात्य विचारक प्रायः अतिवादी रहे हैं क्योंकि उन्होंने जीवन की किसी एक ही आवश्यकता पर अधिक बल दिया। फ्रायड ने केवल 'काम' तथा मार्क्स ने 'अर्थ' को ही समस्त मानवीय व्यवहार एवं सामाजिक सम्बन्धों का नियामक घोषित किया। भारत में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय से समुचित समग्र जीवन का दर्शन प्रस्तुत करते है। जिसमें सभी दृष्टियों से न केवल मनुष्य की संतुष्टि का प्रावधान है। अपितु समस्त मानवीय सम्बन्धों का सबल आधार भी है।

पं. दीनदयाल जी को विचार दृष्टि हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों से प्राप्त हुई है। पं. दीनदयाल जी के प्रेरणास्रोत आदिशंकाराचार्य जी रहे हैं। पं. दीनदयाल दीनदयाल जी वस्तुतः केवल हिन्दू साहित्य के ही पण्डित नहीं थे अपितु पश्चिमी साहित्य विचारधारा के भी पक्षधर रहे हैं। आप की दृष्टि थी कि धर्म भारतीय समाज के इतिहास में महत्वपूर्ण नियामक सिद्धान्त रहा है। अतः भारत का तत्व धर्म है इसको वे हिन्दू ऋषियों—मुनियों की विशिष्ट देन मानते हैं तथा अपने दर्शन के नींव का निर्माण कवच भी इसी को मानते हैं। धर्म, संस्कृतियों, मौलिक मूल्यों का समन्वित और अनुभूतियों का संघटक है। इसका उद्देश्य मानव के समस्त व्यक्तित्व को प्रदीप्त करता है।

वस्तुतः यह कहना पूर्णतः अपरिहार्य है कि व्यक्ति जन्म से ही समाज के एक अंग के रुप में जन्म लेता है, क्योंकि व्यक्ति की सामाजिकता का होना एक अविभाज्य अंग है। अतः व्यक्ति अपने रक्त सम्बन्धी व्यवहार का अधिक विश्वास करता है लेकिन यह कहना गलत है कि केवल परिवार के सीमित क्षेत्रों के आधार पर जीवन के मौलिक

उद्देश्यों की परिपूर्ति कर पाना सम्भव नहीं होता है। यह एक पारस्परिक सहयोग भावना का दिन–प्रतिदिन की क्रियाकलापों से विकसित होता है तथा एक समुदाय, परिवार से ऊपर उठकर विश्व समाज के शीर्षासन पर पहुँचता है।

पं. दीनदयाल जी के उपरोक्त अनमोल विचारों का अनुसरण करके हम आज के आधुनिक युग में भी भारत का चहुँमुखी विकास कर सकते हैं। पं. दीनदयाल जी की वैचारिकी समाज के ऐसी मानवतावादी विचारधारा रही है जो कि जाति, धर्म, समाज में भेदभाव से ऊपर उठकर सम्पूर्ण मानवीय समाज की एकता अखण्डता की भावना से ओत–प्रोत रही है। आप की वैचारिकी न केवल भारतवर्ष में है बल्कि समस्त वैश्विक समाज को छूती हुई दिखाई देती है। आज के आधुनिक दौर में दीनदयाल जी के आत्मिक ज्ञान का पुँज कहे जाने वाली विचारधारा 'एकात्म मानववाद' समाज में एक मार्गदर्शन का कार्य करती है। पं. दीनदयाल जी द्वारा निर्मित सामाजिक दर्शन के सूत्र में भारत में रहने वाला मानव समूह एक जनपुंज है। जिसकी जीव प्रणाली, कला, साहित्य, दर्शन आदि सभी भारतीय संस्कृति के अमूल्य धरोहर के रुप में सृजित है, जो कि भारत में राष्ट्रवादिता के समान संस्कृति आधार का काम करती है। जब इन संस्कृतियों में लोगों के द्वारा निष्ठा की भावना हो तभी भारत एकात्म रह सकता है। भारतीय दर्शन की विशेषता 'वसुधैव कुटुम्बकम' भी रही है। जो राष्ट्र, परिवार, समाज को एकता के सूत्र में बांधने का काम करती है। यह राष्ट्र को एकीकृत किये रहते हैं। पं. दीनदयाल जी ने अपने समाज दर्शन को इसी वसुधैव कुटुम्बकम की विचारधारा से जोड़ने के लिए लोगों में एकात्मवाद जैसे शब्दों का निर्माण किया।

भारत में सभी धर्मों को समान अधिकार प्राप्त है। संस्कृति से किसी व्यक्ति, वर्ग, राष्ट्र आदि जो अनेक मन, रूचि, अचार–विचार, कला–कौशल और सभ्यता का मूल सूचक होता है पर विचार किया जाता है। आधुनिक समाज जिस प्रकार से तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है उसमें व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र में एकता जैसी भावना का लोप होता दिखाई दे रहा है। कारण के रूप में अपनी स्वार्थपरक विचारधारा को दूसरे व्यक्ति के ऊपर थोपने में लगा हुआ है। अपने स्वार्थपूर्ण जीवन को गतिशील बनाने में लगा हुआ है। इस समस्त दुर्गुण विचार को सिरे से खारिज करते हुए पं.

दीनदयाल जी ने एकात्म मानववाद जैसे ज्ञानत्व के भाव को प्रस्थापित किया और एक समाज के निर्माण के लिए एकात्म के चिन्तन पर बल देने के लिए कटिबद्ध रहे हैं।

सामाजिक क्षेत्र में पं. दीनदयाल जी का योगदान मुख्यतः राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्ता के नाते ही रहा है। संघ के अनेक कार्यकर्ता समाज के विभिन्न क्षेत्रों में भेजे गये थे। उसी क्रम में पं. दीनदयाल जी को राजनीतिक क्षेत्र का दायित्व मिला था। लेकिन उन्होंने कभी भी अपने ऊपर राजनीति को हावी नहीं होने दिया। इसके अलावा वे लेखन के माध्यम से भी अपनी सामाजिक भूमिका को अदा करते थे। वे पत्रकार भी थे। वस्तुतः पं. दीनदयाल जी राजनीतिक क्षेत्र में सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टिपथ के प्रतिनिधि थे। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के एक प्रशिक्षण शिविर में भाषण करते हुए उन्होंने कहा ”संघ के स्वयं सेवकों को राजनीति से दूर रहना चाहिए। जैसे कि मैं जानता हूँ एक राजनीतिक महामंत्री का यह कथन पहेली सरीखा था। अतः स्पष्टीकरण करते हुए उन्होंने कहा ‘संघ का स्वयं सेवक समाज के हर क्षेत्र में सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यकर्ता के नाते ही जाता है। विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक संस्थाओं में कार्य करते हुए भी वह उन संस्थाओं में कार्य करते हुए भी वह उन संस्थाओं व क्षेत्र की एकात्मिकता को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता। राजनीति में जाते ही आज जो सत्तावाद एवं दलवाद व्यक्ति पर हावी होता है। इसको राजनीतिक क्षेत्र की मजबूरी माना जाता है। स्वयं सेवक को इससे दूर रहना चाहिए।’

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को समाज में अपने विचारानुसार, राष्ट्रवादी निष्ठाओं को समाजव्यापी बनाने के लिए लोक संस्कार, लोकचेतना का कार्य करते हुए एक स्वच्छ समाज की संरचना करना है। पं. दीनदयाल जी उन व्यक्तित्व में से थे जिन्होंने आर. एस. एस. जैसे संस्थान को स्थापित करने में पुरजोर मेहनत की। इन्होंने राष्ट्रव्यापी जैसे आन्दोलन को जन–जन तक पहुँचाने में एक कर्मयोगी की भाँति महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। इसी क्रम में गोवलकर, एकनाथ रानाडे तथा बाब साहब आप्टे जैसे बुद्धिलब्धि के धनी, इन सभी ने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को पोषित करने में अपने जीवन को लगा दिया। आप लोगों ने संघ को एक व्यापक आन्दोलन का रूप देकर, अनुशासित कार्यकर्ताओं के मनमस्तिष्क में एक शक्ति उत्पन्न की और

उन्हें राष्ट्र सेवा, राष्ट्र भक्ति के मार्ग पर चलने के लिए इन लोगों का मार्गदर्शन किया।

पं. दीनदयाल जी का वैचारिकी भाषण पूर्णतः सामाजिक और सांस्कृतिक था। साथ ही इसी के माध्यम से इन्होंने आर्थिक और राजनीतिक जैसे विषयों को भी नहीं छोड़ा है। इस विषय को बड़े ही मार्मिक ढंग से अनुवाद राष्ट्र प्रेम के संदर्भ में किया है। चूँकि पं. दीनदयाल जी एक सामाजिक नेता थे जिसमें आप ने आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन का भी उल्लेख आपने बहुत ही सारगर्भित रुप से किया है।

पं. दीनदयाल जी का मानना था कि व्यक्ति को समाज के प्रति कर्तव्यों का निर्वाह करने में सक्षम बनाना समाज का आधारभूत दायित्व है और किसी प्रकार की अस्वस्थ की दशा में व्यक्ति को स्वस्थ्य बनाने की व्यवस्था करना तथा उसके जीवन निर्वाह की व्यवस्था करना भी समाज का काम है। इस प्रकार से कार्य जिस राष्ट्र, राज्य में हो वहीं धर्म राज्य है, नहीं तो अधर्म है। पं. दीनदयाल जी भारत में राष्ट्र चेतना विकसित करने के लिए भारत की एक प्रभावी सुरक्षा नीति के पक्षधर थे।

पं. दीनदयाल जी बहुआयामी प्रतिभा, व्यक्तित्व के धनी महापुरुष थे। आप की वैचारिकी दर्शन, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक तथा अन्य सभी क्षेत्रों में मार्गदर्शन का कार्य कर रही है। यह सर्वविदित है कि पं. दीनदयाल जी एक अदम्य प्रतिभाशाली एवं विवेकशील युग पुरुष थे। आपके विचारों का व्याख्यान आज के संदर्भ में एक अपेक्षित भविष्यवाणीकर्ता माना जा सकता है। आप ने युगदृष्टा के तौर पर जो आधुनिक समय की कल्पना की थी वह सपना आज सही साबित हुआ दिखाई दे रहा है।

पं. दीनदयाल जी : आर्थिक विचार

आज से लगभग 2000 वर्ष पहले भारतवर्ष की जीडीपी विश्व की जीडीपी में 33 प्रतिशत की हिस्सेदारी थी। जो की भारत देश की सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत ही सम्पन्न देश था। आज के समकालीन समय में दृष्टिपात करेगें तो हम पायेंगे की समस्या के रुप में बेरोजगारी जैसे शब्दों का होना एकमात्र संयोग के ऊपर निर्भर

होता था। 18वीं शताब्दी में भी भारत की जीडीपी विश्व की जीडीपी से एक चौथाई की हिस्सेदारी दर्ज की थी। जो आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक रूप से हम एक अच्छा जीवन व्यतीत कर रहे थे। परन्तु जैसे ही भारत के ऊपर ब्रिटिश शासन का प्रभाव पड़ा तभी भारत की सम्पूर्ण परिस्थिति पर कुठाराघात लगना प्रारम्भ हो गया था।

स्वतंत्रता के बाद भी भारत की सम्पूर्ण व्यवस्था पश्चिमी विचारधारा से आज भी ग्रसित दिखाई पड़ती है। हम आज अपने समृद्ध, सनातन, वैचारिकी को पीछे छोड़कर पश्चिमी विचारधारा को ही विकास का एक मात्र पहलू मानने लगे हैं। हम अपने सनातनी सांस्कृतिक भाव को खारिज करते हुए उसे भूलते जा रहे है। कालान्तर में 20वीं शताब्दी में देखा गया कि विश्व की सम्पूर्ण परिस्थिति पर खासकर भारत के संदर्भ में देखा जाये तो यह महसूस होता है कि इस कालखण्ड में घटनाएं बहुत ही तीव्र गति से घटित हुई है तथा परिवर्तन भी उसी दृष्टि से गति प्रदान किये हुए है।

पं. दीनदयाल जी अर्थायाम व्यवस्था का विवेचन करते हुए स्पष्ट करते हैं कि समकालीन समय में पूँजीवाद, समाजवाद तथा बाजारवाद व उपभोक्तावादी जैसी आर्थिक व्यवस्थाएं समस्या के रुप में सामने आयी तो विभिन्न प्रकार के जैसे–बेरोजगारी, गरीबी, अशिक्षा आदि समस्याओं का समाधान होना मुश्किल लग रहा है। इसके विकल्प में उदारवाद तथा नवउदारवाद जैसे शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है। इन सभी समस्याओं के विकल्प में भारतीय मनीषी और भारतीय चिन्तन के आधार पर सहयोग हो सकता है। अतः आधुनिक परिवेश में मानव जीवन की समस्त गतिविधियों का सर्वप्रमुख केन्द्र अर्थ है। अर्थ का चिन्तन मानव की आधारभूत इकाई है। भारतीय दर्शन में इसे साध्य न मान कर साधन के रूप में विश्लेषित किया गया है।

पं. दीनदयाल जी अपनी अर्थनीति में पश्चिमी देशों के विकासवादी मॉडल को कारपोरेट मॉडल के आधार पर मानते हैं और विकास की रुपरेखा, मुनाफा केन्द्रित तथा भौतिकतावादी से जोड़ते हैं लेकिन पं. दीनदयाल जी भारतीय विकास के मॉडल को एकात्म मानववादी विकास मॉडल में विश्वास रखते हैं तथा राज्य पर आधारित शासन व्यवस्था के मॉडल की ओर अपने आप को इंगित करने की कोशिश करते हैं।

पं. दीनदयाल जी इसी मॉडल के पक्षधर रहे हैं। राज्य ऐसा हो जहाँ सभी मानवता रुपी मॉडल को समानता से संयोजित किया जाये। अर्थात् हर हाथ को काम और हर पेट को भोजन मिले। सभी समान हो कोई असमानता न हो। पं. दीनदयाल जी द्वारा उचित एकात्म मानववादी विचारधारा में भारत के आत्म दर्शन, वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृतियाँ तथा आधुनिक आध्यात्मिक चिन्तन जैसे दर्शन दिखाई पड़ते है।

पं. दीनदयाल जी ने एकात्म मानववादी दर्शन को व्यावहारिक विकास के मॉडल को विशेष रुप से महत्व दिया है। भारत के समावेशी एवं सर्वांगीण विकास के लिए आर्थिक चिन्तन में भारतीय अर्थव्यवस्था के हर एक महत्वपूर्ण पहलुओं पर अपना ध्यान आकृष्ट किया हैं। चूँकि पं. दीनदयाल जी पश्चिमी पूँजीवादी विचारों को सिरे से खारिज करते हैं। अतः ये मशीनीकरण व औद्योगीकरण के प्रबल विरोधी थे।

पं. दीनदयाल जी ने बाजार को एक छलावा मानते हुए स्पष्ट किया हैं कि बाजार ने हमारी समस्त गतिविधियों को स्टोर्स बना लिया है। आज के वैश्विक परिवेश में जहाँ एक ओर दर्जी का काम रेडिमेड कपड़ा के रुप में परिवर्तन हो गया। नाई जो परम्परागत रुप से अपने कर्म, काम को करता था वह आज सैलून के रुप में तब्दील हो गया अन्य सभी परम्परागत जो भी व्यवसाय थे आज इन्हीं बाजार के चलते उन्हें उनके काम को कठिन बना दिया है जिसमें सह–सम्बन्धों का टूटना निहितार्थ पाया गया है।

पं. दीनदयाल जी कहते हैं कि पिछले 200 वर्षों में भारत की अर्थव्यवस्था को देखा जाये तो मालूम पड़ता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था और पश्चिमी औद्योगिक देशों की अर्थव्यवस्था एक–दूसरे के पूरक हो गये है। जिससे भारत का शोषण ही हुआ है न कि उसको विकसित किया गया है। इस शोषण का प्रमुख कारण है भारत के प्रबुद्ध एवं विशेषीकृत अभिकर्त्ता के रुप में साझीदारी। जो थोड़े से स्वार्थ के लिए जुड़े रहते हैं। जिसमें प्रारम्भ में तो वे एक छोटे से एजेन्ट के रुप में होते हैं परन्तु कालान्तर में उद्योगपतियों से तथा विदेशी रणनीतिकारों ने अपनी ओर झुकाव करके उनसे अपने

मन–मुताबिक आर्थिक हित कराने लगे। जिसका जघन्य प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था पर बहुत ही बड़ा कुठाराघात महसूस किया गया।

पं. दीनदयाल जी का आर्थिक चिन्तन मूल रूप से समग्रतावादी है। वे मानव के विकासवादी मॉडल को महत्वपूर्ण मानते थे। पं. दीनदयाल जी अपनी विचारधारा में ''मानव को केन्द्र में रखते हैं और कहते हैं कि हमे ऐसा कोई विकास का मॉडल बनाना होगा जिसमें मानव केन्द्रित हो। जो कि मानव को केन्द्र में रखकर ही बनाना चाहिए।''

पं. दीनदयाल जी का मानना है कि हमारा सर्वप्रथम कर्तव्य है कि हमें अपनी पारम्परिक हस्तकलाओं को जाग्रत रखना चाहिए तथा पुरानी पद्धति से सम्बन्धित जितने भी यंत्र हो, उन्हें अपनी उत्पादन व्यवस्था में लगाना चाहिए। हमें पूँजीपतियों के अनुसार दिये गये यंत्रों का प्रयोग उनके अधिनायक बना देते हैं और इससे हमारी अर्थव्यवस्था में अंकुश लगना प्रारम्भ हो जाता है।

पं. दीनदयाल जी का कहना है कि आज के परिदृश्य में देखा जाये तो महसूस किया जा सकता है कि भारत के साथ–साथ अन्य विकासशील देशों में पूँजीवादी एवं समाजवादी विचारधाराएँ प्रबल रूप से विकसित हो रही है। जिसका दुष्परिणाम यह होगा कि वहाँ की अर्थव्यवस्था का एक केन्द्रीकरण होता चला जायेगा, जिससे उनकी (विकासशील देशों) परम्परागत अर्थव्यवस्था नष्ट हो जायेगी और उनकी स्थिति में अंकुश लगना प्रारम्भ होगा। इससे उनके कर्तव्यभाव तथा व्यावहारिक स्थिति में परिवर्तन आना प्रारम्भ हो जायेगा। इस प्रकार केन्द्रीकरण हो जाने के बाद देश की अखण्डता, कर्तव्यपरायणता, नागरिकों का सम्मान व देश भाव घटना प्रारम्भ हो जाता है।

पं. दीनदयाल जी का कथन था कि 'हर पेट को भोजन और हर हाथ को काम' होना चाहिए तब जाकर हम एक नये समाज राष्ट्र का निर्माण कर सकेंगे। अतः पं. दीनदयाल जी का यह सम्पूर्ण विचार का सार समाजपरक तथा मानव प्रधान के रुप में सृजित हैं। वह चाहे अर्थव्यवस्था की बात हो या फिर राजव्यवस्था की बात हो। वहां अगर विकेन्द्रीकरण तथा स्वदेशी मॉडल का निर्माण किया गया तो हम एक श्रेष्ठ भारत का निर्माण कर सकते है, क्योंकि खुली आर्थिक प्रतिस्पर्धा पूँजीवादी विचारधारा का

जन्म माना जाता है। पूँजीवादी व्यवस्था एक व्यक्तिवादिता को जन्म देती है। जिससे समाज में विकृतियाँ बढ़ेंगी, असमानता प्रबल रूप से जन्म लेगी, प्रतिस्पर्धा की कट्टरपंथी विचारधारा पनपेगी और समाज असमानता की ओर बढ़ेगा। यहीं पूँजीवादी व्यवस्था समाज में अमानवीकृत घटना को जन्म देती है तथा एक सम्यक् समाज का निर्माण करने में बाधा उत्पन्न करती है।

पं. दीनदयाल जी स्वतंत्र भारत के कालखण्ड की आर्थिक विकास नीति की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि स्वतंत्रता के दौरान भारत के आर्थिक विकास का जो मॉडल था वह कारगर साबित नहीं हो सका। वह पूर्णरूप से समाज में व्याप्त बेरोजगारी, गरीबी तथा मूलभूत आर्थिक समस्याओं का निराकरण करने में असमर्थ रहा है। इसका विवेचन पं. दीनदयाल जी ने अपनी पुस्तक 'The two Palrys' में किया था। पं. दीनदयाल जी अर्थनीति की व्याख्या भारत के संदर्भ में स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि ''भारत की अर्थव्यवस्था के स्तर कालान्तर में जो विचलन हो रहा है उसका मूल कारण है पश्चिमी औद्योगीकरण का समावेशन जिससे भारत की पराकाष्ठा मूल्य, संस्कृति के साथ छोटे–छोटे जो कुटीर उद्योग, हस्तकला का विलुप्त होना है, जिसके कारण मशीनीकरण ने उन्हें जकड़ रखा है।''

पं. दीनदयाल जी ने कहा कि विकास के केन्द्र में व्यक्ति केन्द्रित हो जिसमें शक्ति निहित होने के कारण राष्ट्र को विकास के मार्ग पर ले जाया जा सके। चूँकि व्यक्ति का समाज, राष्ट्र, प्रकृति तथा जैविक से परमेष्टि तक सम्बन्ध होता है जो कि अविभाज्य होने के कारण भावपूर्ण व शोषण मुक्त समाज की कल्पना की जा सकती है। हमें सभी विचारों चाहे वह पुरातन हो या नये नीति निर्माण सभी को सम्मिलित करके उन्हें पुनः विचारानुसार जैसा भी युगानुकूल रूप से तथा स्वदेशानुकूल होना चाहिए। विचार करके ही हम एक समन्वित विकास की कल्पना कर सकते हैं तथा एक श्रेष्ठ समाज को गढ़ सकते है।

हम जब भारत के लिए आर्थिक कार्यक्रम का विचार करते हैं तो हमारे सम्मुख कुछ ऐसे निश्चित लक्ष्य एवं तथ्य आते हैं, जिन्हें हम बदलना नहीं चाहेंगे, बल्कि सब प्रकार से उनका संरक्षण एवं संवर्धन ही हमारे प्रयत्नों का उद्देश्य होना चाहिए। प्रथम भारत के बड़े प्रयत्नों के बाद अंग्रेजों से मुक्ति पाई है। हम किसी भी शर्त पर इस स्वतंत्रता को गँवाना नहीं चाहेंगे। हमारी योजनाओं का प्रथम लक्ष्य होना चाहिए, अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता की रक्षा का सामर्थ्य उत्पन्न करना। दूसरे हमने अपने लिए एक प्रजातंत्रीय ढाँचा चुना है। यदि आर्थिक समृद्धि का कोई भी कार्यक्रम हमारी प्रजातंत्रीय पद्धति के मार्ग में बाधक होता है तो वह हमें स्वीकार नहीं होगा। तीसरे हमारे जीवन के कुछ सांस्कृतिक मूल्य हैं, जो हमारे लिए तो राष्ट्रीय जीवन के कारण, परिणाम और सूचक हैं तथा विश्व के लिए भी अत्यन्त उपादेय हैं।

शोध के उद्देश्य

किसी भी कार्य की सफलता के लिए तत्संबंधी उद्देश्यों का निर्धारण करना आवश्यक है। शोध एक सोद्देश्य क्रिया है। उद्देश्य से ही आगे किए जाने वाले कार्य के क्रियान्वयन एवं संचालन की दशा एवं दिशा का निर्धारण तथा मूल्यांकन कर सकते हैं। उचित दिशाओं तथा सुचारू हेतु भी संबंधित उद्देश्यों का निर्धारण उपयोगी समझा गया। अतः कुछ उद्देश्यो को अपने समक्ष रखकर उनके बारे में इस अध्ययन के माध्यम से जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाएगा। अतः उपर्युक्त शोध अध्ययन हेतु निम्न उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है :–

- पं. दीनदयाल जी के चिंतन को गहराई से जानना एवं समझना।
- पं. दीनदयाल जी के समय विद्यमान सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवेश को जानना व समझना।
- पं. दीनदयाल जी के चिंतन के मूल आधारों का विश्लेषण करना तथा इन आधारों का समाज पर पड़े प्रभावों का अन्वेषण करना।
- पं. दीनदयाल जी के सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विचारों का विश्लेषण एवं मूल्यांकन करना। ।
- पं. दीनदयाल जी के समग्र विचारों का आंकलन करना तथा समसामयिक सन्दर्भो में उनकी प्रासंगिकता का परीक्षण करना।

साहित्य का पुनरावलोकन

किसी भी प्रस्तावित अध्ययन के लिए उससे संबंधित पूर्व में किए गए अध्ययनों एवं उपलब्ध साहित्य की समीक्षा का अध्ययन करना आवश्यक है। पं. दीनदयाल जी से संबंधित अनेक प्रकार के विवरण एवं पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इन उपलब्ध ग्रंथों में पं. दीनदयाल जी के चिन्तन का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। पं. दीनदयाल जी के चिन्तन के सामान्य आंकलन पर केन्द्रित अथवा राष्ट्रीय पुर्नजागरण में उनके योगदान को रेखांकित करने वाले अनेक अध्ययन हुए है। यहाँ शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण साहित्यिक अध्ययनों की समीक्षा की गई है जो निम्न प्रकार से है–

- **मिश्रा, कौशल किशोर (2017) 'पं. दीनदयाल जी का राजनीतिक दर्शन, अनु बुक्स, मेरठ,** प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने पं. दीनदयाल जी के विचारों पर प्रकाश डाला है। इस संदर्भ में लेखक लिखते हैं कि पं. दीनदयाल जी एक ऐसे राजनीतिक चिंतक है, जिनका सम्पूर्ण जीवन और राजनीतिक चरित्र उनके कर्त्तव्य और विचार–चिंतन में समाहित है। उनका सम्पूर्ण राजनीतिक चिंतन राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के प्रचारक तथा भारतीय जनसंघ के महामंत्री व अध्यक्ष के नाते विकसित होता है। वे व्यवहारिक राजनीतिक चिंतक थे। उन्होंने अपने राजनीतिक चिंतन को भारतीय भूमि पर व्यवहारिक रूप प्रदान करने का प्रयास किया। पं. दीनदयाल जी 'पराक्रमवादी सांस्कृतिक राष्ट्रवादी' है। वे अपने राजनीतिक चिंतन के विस्तार में 'हिन्दू राष्ट्रवाद' का प्रासाद खड़ा करते है। 'एकात्म मानव दर्शन' उनके राजनीतिक चिंतन का परिणाम है।
- **मिश्र, विश्वनाथ (2022) 'भारतीय राष्ट्रवाद, डी.के. प्रिन्टवर्ल्ड, नई दिल्ली, 2022** प्रस्तुत पुस्तक में लेखक पं. दीनदयाल जी की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं कि पं. दीनदयाल जी राजनीतिक चिंतक भी थे, कर्तव्यवादी व्यक्तिवादी के पूर्णता के प्रतीक भी थे। स्वतंत्र भारत में एक विरोधी दल को प्रखरतापूर्वक स्थापित कर लोकतंत्र की सम्पूर्णता को प्रकट करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

स्वतंत्र भारत में नेहरू के चमत्कारिक व्यक्तित्व और गांधीवाद के सामने किसी अन्य विचारधारा को स्थापित करने का प्रयास भी एक चुनौती वाला कार्य था। लेकिन दीनदयाल जी ने यह चुनौती स्वीकार ही नहीं की बल्कि एक वैकल्पिक राजनीतिक चिंतन की स्थापना का कार्य सफलतापूर्वक किया।

- **हबीब, इरफान (2020) 'भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रवाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,** प्रस्तुत पुस्तक में लेखक भारतीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में लिखते हैं कि सरदार बल्लभ भाई पटेल की मृत्यु के बाद भारत में नेहरूवाद को चुनौती देने वाला कोई चिंतन नहीं था। एक समय तो ऐसा था कि नेहरूवाद और मार्क्सवाद समानान्तर रूप से भारत में विकसित होने लगे। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय का मॉडल इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। यह सभी भारतीय चिंतन की मुख्यधारा बन गये। तत्कालीन समय में इस विचार प्रक्रिया को चुनौती देने वाला कोई नही था। पं. दीनदयाल जी ने इस चुनौती को स्वीकार किया। वे अखण्ड भारत धर्मराज्य, विकेन्द्रित, अर्थव्यवस्था, राष्ट्रवाद, व्यष्टिवाद, समष्टिवाद, एकत्मवाद को लेकर राष्ट्र के समक्ष उपस्थित हुए। पं. दीनदयाल जी ने अपने चिंतन को ही प्रस्फुटित नहीं किया बल्कि उसको क्रियान्वित कर सकने वाला सुसंगठित राजनीतिक दल, भारतीय जनसंघ को विकसित करने का सफल प्रयास किया।
- **शर्मा, महेश चन्द्र (1994) 'दीनदयाल जी, कर्तव्य एवं विचार, वसुधा पब्लिकेशन प्रा. लि., दिल्ली,** प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने पं. दीनदयाल जी के राष्ट्रवादी विचारों को आलोचनात्मक रूप से संदर्भित करते हुए लिखा है कि हिन्दु–मुस्लिम संदर्भ में दीनदयाल के विचारों का यह आयाम बहुत ही उग्र है। ये विचार स्वातंत्रता सेनानी वीर सावरकर के उन विचारों से काफी मेल खाते हैं जिनका प्रतिपादन है कि धर्मान्तरण ही राष्ट्रान्तरण है। भारतीय मानस ने इन विचारों को सामान्यतः स्वीकार नहीं किया। इसलिए ये विचार तथा इन विचारों के कारण दीनदयाल जी पर्याप्त विवाद के विषय रहे। उन्हें साम्प्रादियक संगठन के नेता अभिहित किया गया।

उपलब्ध शोध साहित्य के गहन विश्लेषण एवं अवलोकन के पश्चात् संक्षिप्त रूप से यही कहा जा सकता है कि पं. दीनदयाल का चिन्तन हिन्दुत्वादी राष्ट्रवाद का समर्थन करते हैं। दीनदयाल द्वारा प्रस्तुत किये गये विचारों का वर्तमान समाज एवं राष्ट्र पर स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता हैं।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन 'पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' के लिये समंकों के विश्लेषण में ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक विधियों का प्रयोग कर उचित निष्कर्ष प्राप्त करने का प्रयास किया जायेगा। प्रस्तुत शोध की पद्धतियां विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक, ऐतिहासिक होगी। अध्ययन के विश्लेषण में भारतीय चिंतन में विशेषतः पं. दीनदयाल जी के योगदान पर उपलब्ध साहित्य लेखों एव अन्य सामग्री का अध्ययन किया जायेगा। समसामयिक सन्दर्भ में उपरोक्त चिंतन की प्रासंगिकता को रेखांकित करने का प्रयास किया जाएगा।

प्रस्तुत शोध विषय में प्राथमिक स्त्रोत हेतु पं. दीनदयाल जी के योगदान पर लिखित साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन शामिल किया है। शोध से संबंधित सामग्री राजस्थान विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकाल, गांधी जी अध्ययन केन्द्र, नेहरू अध्ययन केन्द्र में होना संभावित है। प्रस्तुत शोध प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित हैं। प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के आधार पर प्रभावों को मूल्यांकित किया जायेगा। संकलित समंकों के परस्पर प्रभाव का अध्ययन विश्लेषण विधि द्वारा किया जायेगा।

शोध की परिकल्पनाएँ

परिकल्पना शोधकर्ता को स्पष्ट दृष्टि और शोध उपरांत पाठक को शोध कार्य का सार प्रदान करने में विशेष उपयोगी है। इस शोध विषय से संबंधित उपलब्ध साहित्य का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण शोध विषय को किसी एक परिकल्पना तक सीमित कर पाना विषय की गम्भीरता को अधिक सरल बना देने के समान हैं अतः विविध आयामों का अध्ययन करके शोध की परिकल्पनाओं का निश्चयन किया गया है–

- पं. दीनदयाल जी के विचारों का प्रभाव वर्तमान में समाज पर स्पष्ट दिखाई देता है।
- पं. दीनदयाल जी का समग्र चिन्तन हिन्दुत्व की विचारधारा पर अवलम्बित है।
- पं. दीनदयाल जी के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विचार वर्तमान सन्दर्भ में प्रासंगिक प्रतीत होते है।

शोध का महत्त्व एवं प्रासंगिकता

प्रस्तुत शोध प्रबंध :– 'पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' विषय पर केन्द्रित है। शोधार्थी द्वारा चयन किया गया यह शोध शीर्षक पूर्णतः मौलिक एवं नवीन है। प्रस्तुत शोध शीर्षक के अंतर्गत पं. दीनदयाल उपाध्याय के समग्र विचारों का विश्लेषण करते हुए उनके राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विचारों की वर्तमान में प्रासंगिकता को रेखांकित करने का प्रयास किया जायेगा। प्रस्तुत शोध शोधार्थियों एवं जनसामान्य को पं. दीनदयाल जी के विचारों को समझने के लिए स्पष्ट दृष्टि प्रदान करेगा। शोध शीर्षक की मौलिकता इसे और अधिक प्रासंगिक बनाती है।

शोध कार्य की प्रस्तावित अध्याय योजना

प्रथम अध्याय : परिचयात्मक

द्वितीय अध्याय : पं. दीनदयाल उपाध्याय के राजनीतिक विचार

तृतीय अध्याय : पं. दीनदयाल उपाध्याय के सामाजिक विचार

चतुर्थ अध्याय : पं. दीनदयाल उपाध्याय के आर्थिक विचार

पंचम अध्याय : पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों की वर्तमान में प्रासांगिकता

षष्ठ अध्याय : निष्कर्ष

संदर्भ ग्रंथ सूची

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

पुस्तकें

- टाक, ओमप्रकाश (2006), ''आधुनिक भारतीय चिन्तन'', जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
- पं. दीनदयाल जी, (2014) 'राष्ट्र चिंतन, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।
- पं. दीनदयाल जी, (2008) 'एकात्म मानववाद, जागृत प्रकाशन, नोएडा।
- पं. दीनदयाल जी, (2003) 'अखण्ड–भारत और मुस्लिम समस्या, जागृति प्रकाशन, नोएडा।
- पं. दीनदयाल जी, (1958) 'भारतीय अर्थनीति : विकास की एक दिशा, लोकहित प्रकाषन, लखनऊ
- पं. दीनदयाल जी, (2012) ''एकात्म मानववाद, प्रकाशन–भारतीय जनता पार्टी, नई दिल्ली।
- पुरोहित, बी.आर. (2013), ''राजनीति शास्त्र के मूल सिद्धान्त'', जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
- बेलै, ए. (1983), ''द आइडिया ऑफ नेचुरल जस्टिस इन क्वालिटिज एण्ड अदर ऐसेस'', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी।
- मिश्र, कृष्ण कान्त (2010), ''राजनीति विज्ञान'', रामनगर, नई दिल्ली, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी।
- मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ (1999), ''भारतीय समाज व संस्कृति'', दिल्ली, विवेश प्रकाशन।
- सन्धु, ज्ञान सिंह (2000), ''राजनीति सिद्धांत'', नई दिल्ली, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
- सिह, वीरकेश्वर प्रसाद (2001), ''प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक'', नई दिल्ली, ज्ञानदा प्रकाशन।
- ठेंगड़ी, दत्तोपंत, (2014) ''पं. दीनदयाल जी, विचार–दर्शन, खण्ड–1 : तत्व जिज्ञासा'', सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली।
- शर्मा, डॉ. महेश चन्द्र, (2015) ''पं. दीनदयाल जी : कर्तृव्य एवं विचार'', प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
- आडवाणी, लालकृष्ण, (2008) ''मेरा देश मेरा जीवन, प्रभात प्रकाशन'', नई दिल्ली।

- शर्मा, महेश चन्द्र, (2011) ''पत्रकारिता और दीनदयाल जी : प्रकाशन–भारतीय जनता पार्टी'', नई दिल्ली।
- वर्थवाल, डॉ. हरिशचन्द्र, ''पं. दीनदयाल जी : व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन'', दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली।
- दीक्षित, हृदयनारयण, (2017) ''राष्ट्र सर्वोपरि'', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।
- दीक्षित, हृदयनारयण, (2008) ''भारतीय संस्कृति की भूमिका'', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण।
- झा, प्रभात (सं.), (2016) ''सांस्कृतिक राष्ट्रवाद'', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
- शर्मा, हरिश दत्त, (2017) ''पं. दीनदयाल जी'', फ्यूजन बुक्स, नई दिल्ली।
- पटले, डॉ. जागेश्वर, (2013) ''श्री गुरूजी–हिन्दू राष्ट्र की अवधारणा'', सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली।
- सागर, कृष्णानंद (सं.), (2016) ''दीनदयाल जी की वाणी'', जागृति प्रकाशन, नोएडा।
- पाण्डेय, ओमप्रकाश, (2014) ''राष्ट्रयज्ञ की सामिधेनी'', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।
- तपस्वी, मो.ग., (2001) ''राष्ट्राय नमः'', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
- पटले, डॉ. जागेश्वर, (2013) ''श्रीगुरूजी–एक बहुआयामी व्यक्तित्व'', सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
- गुप्त, तनसुखराम, (2008) ''पं. दीनदयाल जी महाप्रस्थान'', सूर्य भारतीय प्रकाशन, नई दिल्ली।
- गुलाबराय, बाबू, (1996) ''राष्ट्रीयता'', किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली।
- श्रीवास्तव, कमल स्वरूप, (2014) ''भारतीय संस्कृति : निर्माण एवं विभाजन की प्रकृति'', वरूण पब्लिकेशन, दिल्ली।
- यादव, भगत सिंह, (2011) ''युगपुरूष दीनदयाल जी'', जागृति प्रकाशन, नोएडा।
- मुकर्जी राधाकुमुद, (1957) ''हिन्दू संस्कृति में राष्ट्रवाद, एस. चंद एण्ड कंपनी'', दिल्ली।
- नन्दी, आशीष, (2005) ''राष्ट्रवाद बनाम देशभक्ति'', वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
- देव, नरेन्द्र, (1949) ''राष्ट्रीयता और समाजवाद'', ज्ञानमण्डल, वाराणसी।
- शर्मा, हरिश दत्त, (2017) ''पं. दीनदयाल जी'', फ्यूजन बुक्स, नई दिल्ली।
- दुबे, अभय कुमार, (2005) ''लोकतंत्र के सात अध्याय'', वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

जर्नल्स

- ➢ द जर्नल ऑफ द कौसिल फार सोशल डेवलपमेंट– इंटरनेशनल सेंटर
- ➢ अमेरिकन जर्नल ऑफ सोशियोलाजी (सेलेक्टेड वाल्यूम्स)
- ➢ इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्परेटिव सोशियोलाजी (सेलेक्टेड वाल्यूम्स)
- ➢ सोशल फोर्सेस (सेलेक्टेड वाल्यूम्स)
- ➢ इण्डियन जर्नल ऑफ सेक्युलरिज्म, अप्रैल–जून 2021
- ➢ एकोनामिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली मार्च, 6–13, 2018

इनसाइक्लोपीडिया

- ➢ बाई थियोडार्सन एण्ड थियोडार्सन (1969) : ए मार्डन डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी, थॉमस वाई क्रोवेल कम्पनी, न्यूयार्क।
- ➢ एडिनबर्ग, टी.एस.टी. क्लॉक्स, चार्ल्स (1974) : इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड एथिक्स, एडीटर–न्यूयार्क, फिफ्थ एवेन्यू।
- ➢ सैलिगमैन (2008) : इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज–मैकमिलन कम्पनी, न्यूयार्क।
- ➢ ओ.पी. गौबा (2015) : समाज विज्ञान कोश, बी.आर. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली।

समाचार पत्र/ पत्रिकाएं

- राष्ट्रधर्म, मासिक, लखनऊ।
- पांचजन्य, साप्ताहिक, लखनऊ–दिल्ली।
- ऑर्गेनाइजर, साप्ताहिक, दिल्ली (अंग्रेजी)।
- वंदेमातरम्, साप्ताहिक,कलकत्ता।
- कल्याण, मासिक, गोरखपुर।
- हिंदुस्तान टाइम्स, दैनिक, दिल्ली (अंग्रेजी)।

Websites

- https://www.google.com
- https://www.hindustantimes.com
- https://www.mea.gov.in
- https://www.timesofindia.com